ईश्वर या मोक्ष प्राप्ति के उपाय –तप

तप का महत्व – श्रम, संयम एवं त्याग ही तप है, जिसके माध्यम पापों का नाश होता है , शरीर स्वस्थ रहता है एवं परोपकार भाव एवं ईश्वर प्रेम को प्रबल कर व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करता है । आत्मा में तेजस्विता ,सामर्थ , एवं चैतन्यता उत्पन्न करने के लिए तप आवश्यक है । तप की गर्मी से अनात्मतत्वों का संहार होता है । प्रकृति भी दण्ड के रूप में बलात तप(श्रम,संयम एवं त्याग आदि) कराके हमारी शुद्धि करती है । बेहतर होगा कि उस प्रणाली को हम स्वयं ही अपनाएँ अपने गुप्त प्रकट पापों का दण्ड स्वंय ही अपने को देकर स्वेच्छापूर्वक तप करें , तो वह दूसरों या प्रकृति द्वारा बलात कराए हुए तप की अपेक्षा असंख्यगुना बेहतर है । उसमें न अपमान होता है , न प्रतिहिंसा , न आत्मग्लानि से चित्त क्षोभित होता है । वरन स्वच्छा तप से एक आध्यात्मिक आनन्द आता है और इससे उत्पन्न उष्मा और प्रकाश से दैवि –तत्वों का विकास ,पोषण एवं अभिवद्धन होता है । जिसके कारण साधक तपस्वी, मनस्वी और तेजस्वी बन जाता है । हमारे धर्म शास्त्रों में पग–पग पर व्रत, उपवास , दान , स्नान , आचरण आदि विधि –विधान इसी दृष्टि से किये गए है । उन्हें अपनाकर मनुष्य इन दूहरे लाभों को उठा सके ।
रामचरित्र मानस – तपबल रचइ प्रपंच विधाता । तपबल विष्णु सकल जग त्राता ।।
तपबल संभू करहि संघारा । तपबल सेषु धरइ महिभारा ।।
तप अधार सब सृष्टि भवानी । करहि जाइ तपु अस जियँ जानी ।।

मनुष्य के शरीर में पॉच प्रकार के कोष बताए गए है जिनकी वृद्दि एवं शुद्दि आवश्यक है । जिससे परम लक्ष्य चाहे भक्ति हो या मोक्ष प्राप्ति में आसानी होती है । ये साधन भी **तप** की श्रेणी में आते है । –

1– **अन्नमय कोष**, यह शरीराभ्यास का प्रतीक है – आसन (सर्वांगासन, बद्वपदमासन , पादहस्तासन, उत्कटासन, पश्च्मिोत्तानआसन , मयुरासन, सर्पासन, धनुरासन, आदि प्रमूख आसन है), उपावास , तत्वशुद्दि(जल–पर्याप्त मात्रा में जल पीना चाहिए , अग्नि– सूर्य के प्रकाश का भी प्रतिदिन सेवन करना चाहिए , वायू –प्रातः काल की वायू में ऑक्सीजन अधिक होता है उसका सेवन करो , आकाश – सात्त्विक विचार एवं ध्यान करना चाहिए , एवं भूमि तत्व की शुद्दि–नंगे पॉव भूमि पर टहलना ,भूमि की मिटटी को गिला करके उसपर पॉव रखकर बैठना , भूमि पर सोना आदि) , और तप से अन्नमय कोष की वृद्दि होती है । हमारा भौतिक शरीर इसका प्रतिनिधित्व करता है ।

2 – **प्राणमय कोश**, यह गुणों को धारण करता है – बन्ध , मुद्रा , स्वरों का संयम ओर प्राणायाम द्वारा प्राणमय कोश की वृद्दि होती है । इनका आगे विस्तार से वर्णन किया गया है ।

3 – **मनोमय कोश** –मन एवं पॉच ज्ञानेन्द्रियों से इसका निर्माण होता है । यह विचार शक्ति का धारक है – **ध्यान , त्राटक** , **तन्मात्रा साधना** ,और **जप** द्वारा मनोमय कोश की वृद्दि की जाती है । इन साधनों का आगे विस्तार से वर्णन किया गया है ।

4 – **विज्ञानमय कोश** – बुद्दि एवं पॉच ज्ञानेन्द्रियों से इस का निर्माण होता है । यह अनुभवों को धारण करता है – सोऽहमं साधना (श्वास लेते समय सो एवं छोडते समय अहम का उच्चारण करना एवं समस्त प्रकृति को अपने में महसूस करना) आत्मानूभूति (एक ही आत्मा या स्वयं को सभी में महसूस करना), स्वरों का संयम और ग्रंथी भेद (कुण्डली जागरण द्वारा षट चक्रों का भेदन करना) द्वारा विज्ञानमय कोश की वृद्दि होती है ।

मनोमय कोष एवं विज्ञान मय कोष मिलकर सुक्ष्म शरीर का निमार्ण करते है ।

5 – **आनंदमय कोश** – यह सत या परमानंद का क्षैत्र है – नाद(कान बंद करके ओम की ध्वनी सुनने का अभ्यास) , बिंदू (ब्रह्मचर्य का अभ्यास) , कला(शरीर के विभिन्न चक्रों पर ध्यान केन्द्रित करना जिसे कुण्ड़लीजागरण भी कहते है ।) साधना , एवं तुरीय अवस्था (र्निविचार या समाधी की अवस्था) की साधना से आनन्द मय कोश की शुद्दि एवं

वृद्वि होती है । आनन्दमय कोश अविद्या या सुसुप्ति की अवस्था होती है और इसे ही कारण शरीर कहा जाता है ।

आत्मा इन पॉचों कोशों से अलग होती है ।

उपरोक्त पॉचों कोशों का सम्बन्ध शरीर, प्राण , मन, बुद्वि, अविद्या ,आदि से है । इन कोशों की शुद्वि एवं वृद्वि के जो उपाय या साधन बताए गए है, उन तपरूपी साधनों को हम अपने जीवन में अपना कर अपना परम लक्ष्य चाहे वह मानसिक एवं शारिरिक स्वास्थ्य हो , चाहे आत्मदर्शन या ईश्वर साक्षात्कार हो आसानी से प्राप्त कर सकते हैं ।

गीता में कहा है –शरीर में इन्द्रीयों से उपर मन ,मन से उपर बुद्वि , बुद्वि से उपर आत्मा होति है जो कि उस परम पिता परमात्मा का अंश है । शरीर ,मन ,एवं बुद्वि केवल आत्मा के बाहरी आवरण है । इन सभी का नीचे विस्तार से वर्णन किया जा रहा है । –

1 आत्मा – यह सर्वव्यापी (एक ही आत्मा सभी में व्याप्त है) अविनाशी (आत्मा को अग्नि जला नहीं सकती ,जल गीला नहीं कर सकता , वायू सुखा नहीं सकती ,शस्त्र काट नहीं सकते) ज्ञान स्वरूप (काम, क्रोध ,मद, लोभ ,मोह , ईर्ष्या , जो कि मन के धर्म है से रहित) निर्द्वन्द (भूख , प्यास , सर्दि ,गर्मि जो कि प्राण के धर्म है से रहित) सर्वधिसाक्षीभूत (सोच–विचार, संकल्प–विकल्प , जो कि मन के धर्म है एवं निर्णय करना जो कि बुद्वि का धर्म है से रहित है अर्थात मन,बुद्वि,एवं इन्द्रियों के कार्यो की केवल साक्षी अर्थात दर्शक है) निसंग (नितांत अकेली – माता –पिता , पुत्र, स्त्री मित्र सभी रिश्तों से रहित) निष्क्रिय (सभी कार्य सभी प्रकार से प्रकृतिकृत है ,अतः क्रिया भाव से रहित है) निष्काम (सभी प्रकार की इच्छाओं एवं कामनाओं से रहित) निराकार (सभी योनियों में समान भाव से स्थित) ,निर्भय (सभी प्रकार के भयों का अभाव) है । आत्मानुभव का एक मात्र साधन ध्यान है जिससे समाधी प्राप्त कर आत्मानुभव का लाभ प्राप्त होता है अतः आत्मानुभव के लिए समाधी ही एक मात्र माध्यम है । **नाद , बिंदू , कला साधना** एवं **ध्यान** आदि का परम लक्ष्य समाधी ही है ।

नाद –कान बंद करके ओम की ध्वनी सुनने का अभ्यास ।

बिंदू – ब्रह्मचर्य का अभ्यास ।

कला साधना –शरीर के विभिन्न चक्रों पर ध्यान केन्द्रित करना जिसे कुण्ड़लीजागरण भी कहते है ।

ध्यान –यह सविकल्प एवं र्निविकल्प दोनों प्रकार का होता है । सविकल्प में किसी वस्तु या ईश्वर का ध्यान करते है और र्निविकल्प में केवल र्निविचार अवस्था होती है । ध्यान ही परिपक्व होकर समाधी बनता है ।

समाधी – समाधियॉ 27 प्रकार की बताई गई है, जिनमें प्रमुख काष्ठ समाधी – मूर्छा , नशा , क्लोरोफार्म आदि सूॅघने से आई समाधी , भाव समाधी – किसी भावना का इतना अतिरेक हो जाए कि मनुष्य की शारीरिक चेष्टाएं संज्ञाशुन्य हो जाए , ध्यान समाधी – ध्यान में इतनी तन्मयता आजाए कि उसे अदृश्य एवं निराकार सत्ता साकार दिखाई पडने लगे ,इष्टदेव के दर्शन इसी अवस्था में होते है । इसमें यह अन्तर विदित नहीं होता कि हम ध्यान में दर्शन कर रहें है या प्रत्यक्ष नेत्रों से ही देख रहें है ।, प्राण समाधी – ब्रह्मरन्ध्र में प्राणों को एकत्रित करके की जाती है। हठयोगी इसी समाधी द्वारा शरीर को बहुत समय तक मृत बनाकर जीवित रहते है।,ब्रह्म समाधी–इस अवस्था में अपने आपको ब्रह्म में लीन होने का बोध होताहै ।

सहज समाधी – यह सर्व सुलभ है। इसमें व्यक्ति भगवान की शरणागत होकर अपने सभी कार्य उनकी आज्ञापालन एवं निष्काम भाव से करता है , भोग एवं तृष्णा की क्षुद्र वृत्तियों का परित्याग कर देते है । उनके सभी कार्य दैवी प्रेरणा पर निर्भर रहते है इसलिए उनके समस्त कार्य पुण्य बन जाते है । वे सभी प्राणीयों को ईश्वर का अंश मानकर सदैव उनकी सेवा एवं परोपकार में लगे रहते है । भोजन करने में उनकी भावना रहती है कि प्रभू कि एक पवित्र धरोहर शरीर को यथावत रखने के लिए भोजन किया जा रहा है, खाद्य पदार्थों का चुनाव करते

समय शरीर की स्वस्थता उसका ध्येय रहती है स्वादों के चटोरेपन के बारे में वह सोचता तक नहीं कुटुम्ब को भी वह अपनी सम्पत्ति नहीं मानता उसे वह परमात्मा की सुरम्य वाटिका के माली की भांति देखभाल करता है । जीविकोपार्जन को वह आवश्यकतापूर्ति का एक पुनित साधनमात्र समझता है अमीर बनने की तृष्णा उसमें नहीं होती ।

2 प्राण – प्राण शक्ति एवं सामर्थ्य का प्रतीक है । विद्या, चतुराई ,अनुभव,दूरदर्शिता, साहस , लगन, शौर्य , जीवनशक्ति , ओज पराक्रम, पुरूषार्थ, महानता आदि नामों से इस शक्ति का परिचय मिलता है । जिसमें स्वल्प प्राण है उसे जीवित मृतक कहा जाता है । प्राण द्वारा ही श्रद्वा , निष्ठा, दृढता, एकाग्रता और भावना प्राप्त होती है ,जो भव–बंधन को काटकर आत्मा को परमात्मा से मिलाती है । आत्मा बलहीनों को प्राप्त नहीं होती है । दीर्ध जीवन, उत्तम स्वास्थ्य , चैतन्यता, स्फूर्ति , उत्साह, क्रियाशीलता, कष्ट सहिष्णुता, बुद्वि की सूक्ष्मता, सुन्दरता, मनमोहकता आदि विशेषताएं प्राण शक्ति पर ही निर्भर होती है ।
प्राण तत्व का वायू से विशेष संबंध है । सॉस को ठीक तरीके से न लेने पर प्राण की मात्रा का धटना और बढना निर्भर करता है । सॉस सदा पूरी लेनी चाहिए तथ झुककर कभी नहीं बैठना चाहिए । नाभि तक पूरी सॉस लेने से एक प्रकार का कुम्भक हो जाता है । ।इसके अतिरिक्त व्यायाम, गायन, नृत्य आदि भी सभी अंगों में वायू का संचार कर प्राण शक्ति में वृद्वि करते हैं । वायू या प्राण से ही हदय की धडकन चलती है और सारे शरीर में वायू का संचार होता है । मनुष्य शरीर में दस प्रकार के प्राणों का निवास है पॅाच को महाप्राण जो क्रमशः प्राण ,अपान, समान, उदान, व्यान एवं पॅाच लघु प्राण जो क्रमश : नाग , कुर्म , कृकल, देवदत्त , धनन्जय है ।

प्रत्येक प्राणी की श्वास प्रारब्ध के अनुसार निर्धारित है जो जितनी होशियारी से खर्च करेगा उतना अधिक जीवित रहेगा । खरगोश ,मनुष्य ,सॉप,कछुआ क्रमशः 38 , 13 , 8 , 5 बार श्वास लेते है तो उनकी पूर्ण आयू लगभग क्रमश : 8, 120, 1000, 2000 वर्ष मानी गई है । साधारण काम –काज में 12 बार, दौड –धूप करने में 18 बार ,और मैथुन करने में 36 बार प्रति मिनिट के हिसाब से श्वास चलती है ।
प्राणों के लिए बन्ध ,मुद्रा ,स्वरों का संयम और प्राणायाम उचित तप है ।

बन्ध –तीन प्रकार के प्रमुख बंध होते है । मूलबंध – गुदा के छिद्र को उपर की और सिकोडना , जालंधर बंध – मस्तक को झुकाकर ठोडी को कण्ठकूप में लगाना , उडडियान बंध – पेट में स्थित ऑतों को पीठ की ओर खींचना । ये सभी बंध प्राणायाम के समय बहुत उपयोगी होते है ।
मुद्रा – महामुद्रा, खेचरीमुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा अर्थात शिर्षासन , योनिमुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, अगोचरी मुद्रा, भुचरीमुद्रा आदि प्रमुख मुदाएं है ।

स्वरों का संयम –नाक से सॉस लेते एवं छोड़ते समय तीन प्रकार के स्वर चलते है । उनको अपने लाभ के हिसाब से चलाना या नियंत्रित करना ही स्वरों का संयम है ।सोते समय करवट बदल कर या ॲगुली से छेद को कुछ समय बंद करके भी स्वर को बदला जा सकता है ।
1– चंद्र स्वर – यह नाक के बायें छेद से चलता है । इसे दिन में चलाना श्रेष्ठ रहता है । इसमें दान देना , धरसे बाहर जाना , सभी शुभ कार्य, पूजन , विवाह , विद्यारम्भ , मृत्यू , रोग चिकित्सा , औषध निमार्ण , कृषिकार्य , दीक्षा ग्रहण करना , दूसरों पर उपकार, संपत्ति संग्रह, नृत्य–गायन , तिलक लगाना , स्वामी दर्शन , पशु क्रय , इस स्वर के चलने पर यात्रा के लिए बॉयां पॉव आगे रखे एवं बायें हाथ से लेन – देन करें । प्रातः बायें हाथ से मुख स्पर्श करें , लाभ देने वाले लोगों के बायीं और बैठें ।

2– सूर्य स्वर – यह नाक के दाहिने छेद के चलता है । इसे रात में चलाये । इसमें क्रूर कार्य , धर में प्रवेश , सूक्ष्म और कठिन विषयों का ज्ञान , युद्व करना , पर्वत चढना, वाहन पर चढना , व्यायाम करना , दवा लेना , क्रय–विक्रय करना , राजा का दर्शन करना , भोजन, स्नान, गमन, पशु–विक्रय, आदि कार्य करें । इस स्वर के समय यात्रा के लिए दाहिना पॉव आगे निकालें , दाहिने हाथ से लेन–देन करें , प्रातः दाहिने हाथ से मुख का स्पर्श करें एवं लाभ देने वालों के दाहिनी और बैठें ।

सुषम्ना नाड़ी – इसमें दोनों स्वर एक साथ या रूक –रूक कर चलते है । भोग और मोक्षदायक कार्य ,ईश्वर चिंतन, योगाभ्यास आदि इसमें करते है ।

प्राणायाम – लोम–विलोम प्राणायाम , सूर्य –भेदन प्राणायाम , उज्जायी प्राणायाम , शीतकारी प्राणायाम , शीतली प्राणायाम, भस्त्रिका प्राणायाम, भ्रामरी प्राणायाम , मूर्छा प्राणायाम, प्लापिनि प्राणायाम,आदि प्रमुख प्राणायाम है। इनका वर्णन गायत्री महाविज्ञान पुस्तक –पं श्री राम शर्मा आचार्य पुस्तक में है।

प्राण शक्ति या जीवन शक्ति कम होने के कारण :– 1. दुर्बल जीवन शक्ति वाले लोगों के संपर्क से । 2. तिरस्कार व निंदा के शब्द बोलने से । 3. अधिक लोगों के संपर्क से । 4. दूरदर्शन , रेंडियो एवं अखबार आदि में चोरी, दुर्धटना आदि बुरि खबरों, उत्तेजित विज्ञापनों , क्रूर लोगों के चित्र या जीवन चरित्र को देखने ,सुनने या को पढ़ने से। 5. कृत्रिम धागों के वस्त्र पहनना जैसे : टेरीलीन, पेलिस्टर , आदि । 6. प्लास्टिक की चीजों का अधिक उपयोग । 7. रंगीन चश्मा, इलेक्ट्रिक घड़ी, सेंट(कृत्रिम)आदि काम में लेना 8. ऊची एड़ी के सैंडिल या जूतों के उपयोग से 9.अधिक गर्म या अधिक ठण्डी वस्तू खाने या बर्फ के पानी पीने से । 10. टयूबलाईट को देखने से । 11. बीड़ी –सिगरेट , तमाकू , शराब आदि के उपयोग से 12. विकीरण पैदा करने वाली मशीनों के पास रहना जैसे एक्सरे मशीन, फोटोकॉपी मशीन , मोबाईल, कम्प्यूटर टेलिविजन आदि । 13. शक्कर या उससे बनी वस्तुएं खाना या उनका थोड़ासा भी उपयोग करना । 14. अधिक नमक , ब्रेड़,मिठाई , बिस्कुट , तला भोजन , आदि का प्रयोग करना । 15. मैथुन अधिक करने से ।

प्राण शक्ति या जीवन शक्ति बढाने के उपाय – 1. प्रिय काव्य , भजन , गीत , आदि का वाचन पठन , आदि करना । 2 . चलते समय दोनों हाथ आगे –पीछे हिलाना 3. जिव्हा का अग्रभाग तालुस्थान में दॉतों से करीब आधा से. मी. पीछे लगाकर रखें । 4. किसी प्रश्न के उत्तर में हॉ कहने के लिए सिर को आगे पीछे हिलाना 5. हॅसने और मुस्कराते रहने से 6. हरि बोल या राधे – राधे कहते हुए हाथों को आकाश की और उठाने से। 7. हृदय में दिव्य प्रेम की धारा बहरही है ऐसी भावना करने से । 8. ईश्वर को धन्यवाद देने से । 9. स्वास्तिक के चित्र को पलक गिराए बिना एकटक निहारत हुंए त्राटक का अभ्यास करने से । 10. प्राकृतिक वस्त्र जैसे : रेशमी , ऊनी सूती पहनने से । 11. उत्साह युक्त , प्रेम युक्त वचन बोलने एवं सुनने से 12. रीढ की हड़डी सीधी रखने से । 13. पूर्व एवं दक्षिण दिशा में सिर रखकर सोने से । 14. पानी में तैरना या गिली मिटटी में पॉव रखकर बैठने से । 15. तुलसी , रूद्राक्ष एवं सुवर्णमाला धारण करने से । 16. परोपकार का भाव विकसित करने से । 17. संतोष , कमसोचना, मानसिकएकाग्रता में वृद्वि से । 18. देवी–देवताओं एवं महान लोगों को चित्र देखने एवं उनके जीवन चरित्र पढ़ने से 19. सीधी – सपाट एवं कठोर कुर्सि पर बैठना एवं भूमि या तख्ते पर बिस्तर लगाकर सोने से 20. हल्के सात्विक भोजन केवल जोर की भूख लगने पर ही करने से । 21. प्रातः जल्दि उठना 22. ताजा पानी से स्नान करना । 23. योग, व्यायाम एवं यथासंभव पैदल अधिक चलने से । 24. स्वावलंबी बने एवं सुख–साधनों का न्यूनतम उपयोग करें । 25. यथासंभव ब्रह्मचर्य का पालन करने से ।

3 बुद्वि – निर्णय करने की शक्ति में बुद्वि का ही योगदान होता है , बुद्वि का मापदण्ड व्यक्ति का ज्ञान एवं अनुभव ही होता है और उसी के आधार पर वह निर्णय लेता है उसकी बुद्वि के द्वारा लिए गये निर्णय ही उसके लोक एवं परलोक सुधारने या बिगाडने के लिए जिम्मेदार होते है । कई बार बुद्वि तो उचित निर्णय दे देति है अर्थात सही या गलत का निर्णय कर देती है परन्तु संकल्पशक्ति के अभाव में , मन या इन्द्रीय सुख के वशीभूत होकर व्यक्ति उन निर्णयों को नहीं मानता । जब व्यक्ति गुरू ,शास्त्र श्रवण ,**स्वाध्याय**,**चिंतन** एवं सतसंग द्वारा ज्ञान प्राप्त कर अपनी बुद्वि का विकास करता है ,जिससे उसकी निर्णय शक्ति प्रबल होती है ।यही बुद्वि का तप है ।

स्वाध्याय का महत्व –ईश्वर के विभिन्न अवतारों द्वारा वेद, पुराण, गीता, रामायण आदि धर्मशास्त्रों में अपना निवास बताया है एवं इनके अध्ययन से प्राप्त होने वाले लाभों एवं पुण्यों का विस्तार से वर्णन भी किया है। इससे स्वाध्याय का महत्व स्वतः सिद्व हो जाता है। स्वाध्याय का सम्पूर्ण महत्व तो बताना किसी भी व्यक्ति के लिए असम्भव है, कुछ लाभ स्वाध्याय के बताए जा रहे है। जिनका उद्वेश्य है कि अधिक से अधिक लोग स्वाध्याय को अपने दैनिक जीवन में अपना कर अपने में सदगुणों का विकास एवं ज्ञान में वृद्वि करें एवं अपनी उपासना के परमलक्ष्य को शीघ्र प्राप्त कर अपने जीवन को सफल बनावें ।

सदगुणों के विकास का साधन स्वाध्याय –शिक्षाप्रद एवं धार्मिक पूस्तको के अध्ययन से मनुष्य में दुर्गुणों का नाश होकर सभी सदगुणों का विकास होता है । वास्तव में सदगुणों से युक्त मनुष्य ही अपने जीवन में उन्नति कर अपने वास्तविक लक्ष्य एवं परमात्मा को भी
प्राप्त कर सकता है।

सभी उपासनाओ का प्रेरक एवं मार्गदर्शक स्वाध्याय – चाहे कर्मयोग हो ,
भक्ति योग हो अथवा ज्ञानयोग हो सभी उपासना पद्वतियों में स्वाध्याय प्रेरणा एवं मार्गदर्शन में एक
महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गीता की पुस्तक हाथ में लेकर देशभक्त हॅसते – हॅसते शहीद हो गए, भक्त भी जब धार्मिक पुस्तक पढता है तो आनन्द विभोर हो उठता है । विभिन्न धार्मिक एवं
संतों की पुस्तकों के माध्यम से योगी जन भी अपनी शंकाओं का समाधान एवं मार्गदर्शन प्राप्त कर
अपनी उपासना में प्रगति करते हैं। योग वशिष्ट जो कि योग के क्षैत्र में एक महत्वपूर्ण पुस्तक है,
में भी कई जगह स्वाध्याय को ध्यान एवं योग के क्षेत्र में प्रगति का एक महत्वपूर्ण साधन माना है।लोक मान्य तिलक ने तो गीता की पुस्तक पढते हुए बडा ही कष्टप्रद आपरेशन करवा लिया था
जो इस बात का प्रतीक है कि पुस्तकों के अध्ययन में ऐसी तल्लीनता प्राप्त हो जाती है जो लंबी
योग साधनाओं से भी प्राप्त नहीं होती है ।

सभी रोगों की दवा स्वाध्याय–लगभग सभी आम शारीरिक रोगों जैसे हृदय रोग,

ब्लडप्रेशर, डाईबिटीज आदि में मानसिक तनाव को ही प्रमुख कारण माना गया है। वर्तमान शिक्षापद्वति, बढती प्रतिस्पर्धा की भावना, एवं आधुनिक जीवनशैली भी मानसिक रोगों में व द्वि का
एक प्रमुख कारण है। शिक्षाप्रद एवं धार्मिक पुस्तकों के स्वाध्याय से मानसिक शांति, हृदय गति का
संतुलित होना, जीवन की समस्याओं से बहादुरी से लडने की प्रेरणा , ईश्वर में विश्वास आदि बातों
से मानसिक तनाव को समाप्त करने में काफी योगदान प्राप्त होता है ।

साम्प्रदायिक सदभाव के विकास का माध्यम स्वाध्याय – आज विभिन्न धर्मो
के अनुयायी अपने – अपने धर्म को श्रेष्ठ मानकर एवं दूसरों के धर्मों को नीचा मानकर आपस में
लड रहें है । यदि सभी धर्मों का अध्ययन किया जाए तो यह भ्राति दूर हो जाती है एवं एक दूसरे
धर्म के प्रति आदर भाव विकसित होता है । उदाहरणार्थ यदि कोई भी मुस्लिम भाई जिसने कभी भी
कुरान का एक बार भी मन से अध्ययन किया हो वह दूसरे धर्म के अनुयायी को जान से मारना तो
दूर एक थप्पड भी मारना पसन्द नहीं करेगा । कुरान शरीफ में दया ,क्षमा , ईमानदारी , आदि अनेक गुणों पर बल दिया गया है । क्योंकि मुस्लिम समुदाय का एक बडा वर्ग अशिक्षित है और उन्हें धर्म के नाम पर जो भी सिखा दिया जाता है वे उस पर विश्वास कर उसे अमल में लातें है
।यही हाल हिन्दू एवं अन्य धर्मो का भी है जहां कटटरपंथी धर्म के नाम पर कटुता का वातावरण
पैदा कर रहें है, शिक्षा के प्रसार एवं स्वाध्याय के माध्यम से यह समस्या दूर हो सकती है ।

स्वाध्याय को आम जनता के दैनिक जीवन में शामिल करने की आवश्यकता–आप किसी भी समस्या या मानसिक तनाव में हो, तो किसी भी शिक्षाप्रद या धार्मिक पुस्तक का अध्ययन आपको तुरन्त मानसिक शान्ति एवं उस समस्या से मुकाबला करने की
प्रेरणा देगा । गीता का निष्काम कर्मयोग हो या भगवत शरणागति ये सभी उपाय मनुष्य को सभी
चिन्ताओं से मुक्त कर देतें है । आवश्यकता इस बात की है कि स्वाध्याय आम जनता को सुलभ हो
एवं उसका उनके दैनिक जीवन में उपयोग हो ।

शिक्षाप्रद, धार्मिक एवं दुर्लभ पुस्तकों एवं ग्रंथों का कम्प्युटरीकरण कर उन्हेंसुरक्षित करना एवं डी.वी.डी. या इन्टरनेट के माध्यम से लोगों को पढने एवं डाउनलोड करने के लिए उपलब्ध करवाना – आज लोगों के पास पुस्तकों को रखने
के लिए स्थान का अभाव है । पुरानी पुस्तकों को चूहों एवं दीमक से बचाना भी एक समस्या है ,
घर पर पढने के लिए समय का भी अभाव है । चूंकि कम्प्यूटरों का घर, दुकान, एवं ऑफिसों में प्रयोग बढ रहा है । सैंकडो पुस्तकें बहुत ही कम मैमोरी में डाउनलोड हो जाती है, अपना फालतू

समय जो घर ऑफिस या दुकान में व्यर्थ की बातों में चला जाता है उसमें कुछ स्वाध्याय प्रतिदिन
अवश्य किया जा सकता है। वैसे भी कहा गया है कि ' एक घडी आधी धडी आधी में पुनि आधि,
तुलसी संगति साधु कि हरे कोटि अपराध ' स्वाध्याय भी सतसंग का ही एक रूप है । सतसंग में
व्यक्ति के माध्यम से व्यक्ति मार्गदर्शन प्राप्त करता है, स्वाध्याय में पुस्तक माध्यम होती है । स्वाध्याय करना घर बैठे सतसंग करना ही है।

दुर्लभ ग्रन्थ भी कम्प्युटरीकरण के माध्यम से आने वाली पीढी के लिए सुरक्षित रह सकेंगे।कुछ लोगों द्वारा वेद, पुराण , गीता , रामायण, एवं अन्य ग्रन्थों एवं उत्क ष्ट साहित्यिक सामग्री इन्टरनेट पर लोगों के पढनें एवं डाउनलोड करने के लिए विभिन्न धार्मिक एवं अन्य साईटों
द्वारा उपलब्ध कराए गए है मैं उन्हें बारम्बार प्रणाम करता हू वे वास्तव में साधूवाद के पात्र है । अभी भी उपनिषद , विभिन्न सहिंताएॅ जो कि लुप्तप्राय हो गई है एवं अन्य दुर्लभग्रन्थों का कम्प्युटरीकरण का कार्य अभी बाकी है । मेरा विद्वान लोगों से भी अनुरोध है कि यदि उनके पास
कोई अच्छा एवं दुर्लभ ग्रन्थ या पुस्तक है तो उसे स्केन करा कर या अन्य माध्यम से कम्प्यूटरीकरण किया जाए फिर सी.डी., डी.वी.डी.या इन्टरनेट के माध्यम से लागों को उपलब्ध कराया जावे ।

स्वाध्याय का महत्व विभिन्न ग्रंथों में एवं विद्वानों की राय में–

'

शतपथ ब्राह्मण –जितना पुण्य धन–धान्य से पूर्ण इस प थ्वी को दान देने से मिलता है उसका तीन गुणा पुण्य तथाउससे भी अधिक पुण्य स्वाध्याय करने वाले को मिलता है। 'ब्राह्मण का स्वाभाविक कर्म स्वाध्याय है, जिसदिन वह स्वाध्याय नहीं करता उसी दिन वह ब्राह्मणत्व से पतित हो जाता है '

आचार्य श्री राम शर्मा – अच्छी पुस्तकें जीवन्त देव प्रतिमाएं है जो उपयोग करने पर तुरन्त प्रकाश एवं उल्लास प्रदान करती है । स्वाध्याय करना धर बैठे सतसंग करना ही है। सतसंग में माध्यम व्यक्ति होता है, स्वाध्याय में माध्यम पुस्तक होती है।

योग भाष्यकार व्यास – वेद शास्त्रों में श्रम का सबसे बडा महत्व है । हर एक को कुंछ न कुछ श्रम नित्य प्रति करना ही चाहिए, इस श्रम के क्षेत्र में स्वाध्याय ही सबसे बडा श्रम है। स्वाध्याय द्वारा परमात्मा में योग करना सीखा जाता है और समस्वरूप योग से स्वाध्याय किया जाता है योग पूर्वक स्वाध्याय से ही परमात्मा का साक्षात्कार हो सकता है। अपने आप को जानने के लिए स्वाध्याय से बढ कर अन्य कोई उपाय नहीं है। यहां तक कि इससे बढकर कोई पुण्य भी नहीं
है ।

श्री कृष्ण –जो सदा मन में सब प्राणियों पर प्रसन्न रहते है और मध्याह्न काल तक धर्म ग्रंथों का स्वाध्याय करते है उनकी मैं सदा पूजा करता हूं ।

महर्षि व्यास – हे मनुष्यों , उम्र बीत जाने पर भी यदि विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो तो तुम निश्चय ही बुद्विमान हो । विद्या इस जीवन में फलवती न हुई तो भी दूसरे जन्मों में वह आपके लिए सुलभ बन जाएगी । स्वाध्याय युक्त साधना से ही परमात्मा का साक्षात्कार होता है । '

गीता – इस संसार में ज्ञान से बढकर कोई श्रेष्ठ पदार्थ नहीं है ।

महात्मा गांधी – स्वाध्याय से बढकर आनंद कुछ नहीं , मुझे नरक में भेज दो वहॉ भी स्वर्ग बना दूंगा , यदि मेरे पास अच्छी पुस्तकें हों।

योगवासिष्ठ –अविद्या का आधा भाग सतसंग से नष्ट हो जाता है , चौथाई भाग शास्त्रों के स्वाध्याय से एवं शेष चौथाई स्वंय के पुरूषार्थ सें नष्ट होता है ।

चिंतन– उसे निरंतर मृत्यू ,रोग, एवं वृद्वावस्था द्वारा जीवन के क्षय एवं अस्थिरता का चिन्तन करना चाहिए । संसार असार है ,वह केवल ईवर की लीला मा़त्र है , सभी भोग –विलास नर्क के द्वार है एक स्वप्न से अधिक संसार का कोई अस्तित्व नहीं है ।

ईश्वर सभी प्राणियों में विद्यमान है यह सदैव महसूस करें । मन की सभी कामनाओं एवं संकल्प –विकल्पों का त्याग कर प्रत्येक समय केवल ईश्वर का (नाम, रूप , लीला, स्वरूप, उपदेश एवं उनके गुण) निरंतर स्मर्ण करो । ईश्वर के भक्तों के गुणों एवं लीलाओं का स्मर्ण करो ।

भक्तों के प्रमुख गुण – समदर्शिता (सभी को समान समझना), सहिष्णुता (अपमान,कष्ट एवं कटुवचनों को सहना), अकिंचनता (संग्रह रहित रहना) अस्तेय (चोरी न करना), अनुसूयारहित (दूसरों में दोष न देखना) अहंकार(कर्तापन एवं श्रेष्ठता का) न होना ,निष्कामता (स्वार्थ एवं व्यर्थ चिन्तन रहित रहना), अहिंसा (मन, वचन एवं कर्म से किसी को कष्ट न देना),शांतस्वभाव (भयंकर विपरीत परिस्थितियों में भी) , क्षमा , दया , धैर्य , निर्भयता, अनासक्ति , विनम्रता , संयम, परोपकार ,संतोष ,उदारता , दानी, सबसे निस्वार्थ प्रेम,ज्ञानजिज्ञासू, सर्वदा प्रसन्न , आलस्य(सभी कार्यों में) न करना , एकान्तवासप्रियता, ईमानदारी, चुगली एवं निंदा न करना , सतसंग प्रियता (सदेव ईश्वर के नाम ,स्वाध्याय , संतो आदि का संग ।)आदि है ।

3 मन –स्मृति एवं सभी प्रकार के संकल्प –विकल्प करना मन का कार्य है । मन के सोच –विचार बंद होते ही व्यक्ति ध्यान की अवस्था में पहुंच जाता है और ध्यान परिपक्व होने पर स्वतः ही समाधी में बदल जाता है । समाधी ही आत्मानुभव का एक मा़त्र साधन है । आत्मानुभव का आंनद प्राप्त करने के पश्चात सभी सांसारिक इच्छाएं समाप्त हो जाती है , सभी सिद्वियां स्वतःसुलभ हो जाती है ,व्यक्ति अपने को उस परमात्मा अंश महसूस करने लगता है ।

मन को वश में करने के लिए **एकांतसेवन, आसन** , **इंद्रियों का संयम** ,**भक्ति** एवं **ध्यान,त्राटक, तन्मात्रा साधना** आदि प्रमुख साधन है । ये मन के प्रमुख तप है ।

एकांतसेवन – यथा संभव एकांत में रहो, वाद–विवाद से दूर रहो, विचारो से रहित रहो । उस समय ईश्वर का स्मर्ण , ध्यान या चिंतन कर सकते है ।

आसन – आसन के अभ्यास से एक ही अवस्था में लम्बे समय तक रहने के अभ्यास मानसिक एकाग्रता ,भूख –प्यास पर नियंत्रण , सर्दी –गर्मी आदि मौसन को बर्दाश्त करने की क्षमता , आदि अनेक सिद्वियॉ प्राप्त होती है जो हमारी साधना में बहुत उपयोगी होती है । (प्रमुख आसन – सर्वागांसन, बद्वपदमासन , पादहस्तासन, उत्कटासन, पश्च्मोित्तानआसन , मयुरासन, सर्पासन, धनुरासन, आदि प्रमुख आसन है)

इंद्रियों का संयम – दृढ संकल्प , स्वाध्याय , ईश्वर का स्मर्ण , ध्यान आदि साधनों से इन्द्रियों का संयम किया जा सकता है , जो कि प्रत्येक साधना में अत्यंत आवश्यक है ।

भक्ति –भगवान की शरणागति ,पूजा,नाम का जाप ,स्वरूप का ध्यान ,स्वाध्याय ,सतसंग आदि प्रमुख साधन है । जिनसे मन की एकाग्रता, ध्यान , समाधि , आत्मसाक्षात्कार एवं ईश्वर के दर्शन सभी कुछ प्राप्त हो जाता है । भक्ति मार्ग के अन्य साधन जो पापों का नाश करने वाले एवं स्वर्ग प्रदान करने वाले है जिनमें तीर्थयात्रा , व्रत , यज्ञ, दान, यम –नियम , तप , योग आदि है ।

भगवान की शरणागति– भगवान की शरणागति में भक्त अपने सभी हानी –लाभ ईश्वर के भरोसे छोड़ कर केवल निष्काम कर्म परोपकार के भाव से करता है जिससे उसके मन के सभी संकल्प– विकल्प,चिंता आदि समाप्त हो जाते है एवं मन में परम शांति एवं एकाग्रता का साम्राज्य स्थापित हो जाता है । भगवान की शरणागति ही सहज समाधी में परिवर्तित होकर आत्मसाक्षत्कार एवं ईश्वरदर्शन का माधम बन जाती है । पश्चिम मै इतना तनाव एवं चिंता है कि हर चार में से तीन आदमी विक्षिप्त हालत में है उसका कारण है वे केवल अपनी मर्जी से चलने का प्रयास करते है ।

नानक कहते है – उसके हुक्म , उसकी मर्जी के अनुसार चलो । जैसा उसने लिख रखा है वैसा चलो । उसके हुक्म और उसकी मर्जी के अनुसार सब उस पर छोड़ दो । जैसा वह जिलाए वैसा जियों , जैसा वह कराए वैसा करो , जहां वह लेजाए ,जाओ । उसका हुक्म ही तुम्हारी एक मात्र साधना हो । तुम अपनी मर्जी हटाओ उसकी मर्जी आने दो तुम इनकार मत करो । दु:ख आये तो दु:ख को भी स्वीकार कर लो और अहो भाव रखो , धन्य भाव रखो कि अगर उसने दु:ख दिया है तो उसमें भी कोई राज होगा , कोई अर्थ होगा ,कोई रहस्य होगा। तुम शिकायत मत करो ,तुम धन्यवाद से ही भरे रहो । वह तुम्हें जैसा रखे गरीब तो गरीब , अमीर तो अमीर , सुख में तो सुख में दु:ख में तो दु:ख में एक बात तुम्हारे भीतर सतत बनी रहे कि मै राजी हूं तेरा हुक्म मैरा जीवन है । और तुम पाओगे कि तुम शांत होने लगे हो। जो लाख ध्यान मैं बैठकर नहीं होता था वह उसकी मर्जी पर सब छोड़ देने से होने लगा है और हो ही जाएगा क्योंकि चिंता का काई कारण नहीं रहा । चिंता क्या है ? जैसा हो रहा है उससे अन्यथा होना चाहिए था। बेटा मर गया , नहीं मरना चाहिए था पत्नि बिमार है नहीं होनी चाहिए थी । व्यापार में घाटा हो गया नहीं होना चाहिए था । पुलिस परेशान कर रही है नहीं करनी चाहिए थी । और जैसा नहीं हो रहा है वैसा होना चाहिए था । धन चाहिए , पु त्र, पत्नि सम्मान सभी होने चाहिए। इच्छाएं एवं चिंता ही ध्यान को विकृत करती है । तब तुम कैसे शांत हो सकोगे ।

जो लिखा है वही होगा, अपनी तरफ से कुछ भी करने का कोई उपाय नहीं है । कोई परिवर्तन नहीं हो सकता फिर चिंता किस बात की ?जब तुम बदलना ही नहीं चाहत कुछ , जब तुम उससे राजी हो , उसकी मर्जी में राजी हो जब तुम्हारी अपनी कोई मर्जी है ही नहीं तो कैसी बैचेनी ,तब कैसे विचार, तब सब हल्का हो जाता है ।पंख लगजाते है तब तुम आकाश में उड़ सकते हो , उसका एक ही सुत्र है परमात्मा की मर्जी ।

अपनी तरफ से तुमने बहुत कोशिश करके देख ली क्या हुआ तुम वैसे– के वैसे हो जैसा उसने भेजा उससे अपनी कोशिशों के कारण विकृत भले ही हो गए , सुकृत नहीं हुए । तुम्हारी कोशिश सिर्फ तनाव और चिंता ही देगी । समस्या हल न कर सकेगी । समस्या उसकी कृपा से ही हल होगी ।

नानक कहते है न जप ,न तप, न ध्यान , न धारणा एक ही साधना है उसकी मर्जी जैसे ही तूम्हें उसकी मर्जी का ख्याल आयेगा तुम पाओगे भीतर सब कुछ हल्का हो जाता है , एक गहन शांति, एक वर्षा होने लगती है ।

तुम तेरो मत बहो बहो , नदी ये लड़ो मत । नदी दुश्मन नहीं है मित्र है तुम बहो लड़ने से दुश्मनी या तनाव पैदा होता है । जब तुम उल्टी धार तैरने लगते हो नदी तुमसे संघर्ष करने लगती है । तुम सोचते हो नदी तुमसे दुश्मनी कर रही है । नदी को तुम्हारा पता भी नहीं है । तुम्हारी मर्जी यानी उल्टी धारा , अहंकार यानी उल्टी धारा । उसकी मर्जी तुम धारा के साथ एक हो गए । अब नदी जहॉ ले जाए वही तुम्हारी मंजील है , यदि डुबो दे तो भी वही मंजील है । फिर कैसी चिंता कैसा दुखः

अगर तुम लड़रहे हो परमात्मा से ,अगर तुम अपनी इच्छा पूरी कराना चाहते हो – चाहे प्रार्थना हो , पूजा से ही सही – अगर तुम्हारी अगर तुम्हारी अपनी इच्छा है तो तुम अधार्मिक हो उसकी आज्ञा से जो चलने लगेगा , जो अपनी इच्छा से हिलता –डुलता भी नहीं जिसका अपना कोई भाव नहीं , कोई चाह नहीं जो अपने को आरोपित नहीं करना चाहता । वह उसके हुक्म में आगया वहीं धार्मिक है । उसके हुक्म को मानना ही उसके हृदय तक पहुॅचने का द्वार है ।

जब तु जीतो तो यह मत सोचना कि मैं जीत रहा हूं , जब तुम हारो तो यह मत सोचना कि मैं हार रहा हूं , वही जीतता है और वही हारता है । इसे ही उसकी लीला कहते है । भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है कि तू व्यर्थ बीच में अपने को मत ला , वही करी रहा है और वही करवा रहा है । यह युद्व उसका आयोजन है जिनका मारना है वह मारेगा जिसको बचाना है वह बचायेगा ।

ओशो ने कहा है –अनेक भक्त कहते है कि बड़ई तेरी और बुराई मेरी ऊपर से देखने में अच्छा लगता है , वे बहुत विनम्र प्रतीत होते है लेकिन यह विनम्रता वास्तविक नहीं है तुमने अपने अहंकार के लिए थोड़ा सा बचा लिया । जब बुराई मेरी है तो बड़ाई तेरी कैसे होगी या तो दोनों मेरे होगें या दोनो तेरे होंगे । बड़ाई भी उसकी बुराई भी उसकी हम बीच में आते ही नहीं , हम तो बासं की पोगंरी है , वह गीत जैसा गाये उसकी मर्जी । इतनी भी अकड़ क्यों बचाकर रखते हो कि अगर भूल–चूक हुई तो मेरी । तुम रत्ती भर भी बचाओगे तो वह पूरा का पूरा बचा हुआ है । वह कहीं गया ही नहीं तुमने छिपाया है ।

जब तुम्हें दुःख मिलता है तो तुम किसी को जिम्मेदार ठहराते हो अपने को पत्नि को पिता को या पड़ोसी को यदि ठहराना है तो उसके हुक्म को जिम्मेदार ठहराओ अपने पूर्वजन्म के कर्मों को जिम्मेदार ठहराओ । कभी दूसरे को दोषी मत ठहराना और जब खुशी आये तो अपने अहंकार को मत भरना । सभी सफलताओं और सब स्वादिष्ट फलों का मालिक वही है । तुम सब उसी पर छोड़ दो तो सब खो जाएगा , सिर्फ आनन्द शेष रह जाएगा ।

कोई गाली दे तो दुःख होता है , माला पहनाए तो खुशी होती है जबकि दोनों ही घटनाएं अहंकार को घटित हो रही है । एक ही अज्ञान है मैंने किया है और एक ही ज्ञान है वह पुरूष कर्ता है मैं केवल माध्यम हूं ।मंदिर, तीर्थस्थान , धर्मग्रंथ उस परमात्मा की प्राप्ति के नक्शे हैं । उन्हें लेकर बैठने से मंजील तक न पहुंच सकोगे । उनके मार्गदर्शन में कर्म करने से ही पहूंचोगे ।

तुम क्षुद्र बातों के लिए तो धन्यवाद देते हो । तुम्हारा रूमाल गिर गया तुम उसे उठाने वाले को धन्यवाद देते हो और जिसने जीवन दिया और अन्य सभी सुख निरंतर भेज रहा है ,उसको धन्यवाद नहीं देते हो । जब भी गए हो शिकायत लेके गए हो ऐसा होना चाहिए ऐसा नहीं । धार्मिक आदमी का लक्षण है कि जो मिलजाए वह मेरी योग्यता से अधिक है । सोचो देखो जो तुम्हें मिला वह तुम्हारी योग्यता से सदा अधिक है। फिर भी अहोभाव पैदा नहीं होता ।

पूजा –संसार से अपना ध्यान हटाकर भक्त जब एकाग्र एवं शांत मन से बड़ी ही श्रद्वा के साथ अपने भगवान की पूजा करता है । तो वह पूजा ही उसकी मानसिक एकाग्रता एवं ईश्वर प्राप्ति का मार्ग बन जाती है । गीता में भगवान ने कहा है कि भक्त मुझे जो भी पत्र –पुष्प आदि प्रेम से अर्पण करता है मैं बड़े प्रेम से उसे स्वीकार करता हूं ।

ईश्वर नाम का जप –जप करने से मन की प्रवृत्तियों को एक ही दिशा में लगा देना सरल हो जाता है , मानसिक एकाग्रता जो सभी साधनाओं का मूल है में जबरदस्त वृद्वि होती है और यदि लम्बे समय तक किया जाए तो ध्यान एवं समाधी भी सहज ही फलीभूत हो जाती है । आत्मसाक्षत्कार हो या ईश्वर के दर्शन सभी के लिए ईश्वर के पवित्र नाम का स्मर्ण सबसे आसान एवं अचूक उपाय है । अतः जब भी काम से अवकाश प्राप्त हो ईश्वर नाम जप करना चाहिए । निरंतर पुनरावृत्ति करते रहने से मन में उस प्रकार का अभ्यास एवं संस्कार बन जाता है, जिससे नाम जप स्वभावतः चलता रहता है । नित्य का जप एक आध्यात्मिक व्यायाम है , जिससे आध्यात्मिक स्वास्थ्य को सुदृढ एवं सूक्ष्म शरीर को बलवान बनाने में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है । लम्बे सफर में ,स्वयं रोगी होजाने पर , किसी रोगी की सेवा में संलग्न होने पर ,जन्म – मृत्यू का सूतक लगजाने पर , स्नान आदि की पवित्रता की सुविधा नहीं होने पर भी मानसिक जप चालू रखना चाहिए । मानसिक जप बिस्तर में पडे–पडे , रास्ते में चलते समय, किसी भी पवित्र या अपवित्र देश में किया जा सकता है । जप करते समय मस्तिष्क के मध्य भाग में ईश्वर का या प्रकाश ज्योति का ध्यान करना चाहिए । साधक का आहार –व्यवहार सात्विक होना चाहिए । माला जपते समय सुमेरू का उल्लंधन नहीं करना चाहिए । सूमेरू आने पर उस माला को मस्तिष्क एवं नेत्रों से लगाकर फिर से उल्टी कर चालू करनी चाहिए ।

गीता एवं योग ग्रंथों में जप को सर्वश्रेष्ठ यज्ञ बताया है ।

मनुस्मृति – होम, बलिकर्म, श्राद्व, अतिथि–सेवा, पाकयज्ञ , विधियज्ञ, दर्शपौर्ण–मासादि यज्ञ, सब मिलकर भी जप यज्ञ के सोलहवें भाग के समान भी नहीं होते ।

महर्षि भारद्वाज – समस्त यज्ञों में जप यज्ञ अधिक श्रेष्ठ है । अन्य यज्ञों में हिंसा होती है ,पर जप यज्ञ में नहीं होती , जितने कर्म,यज्ञ, दान , तप है, सब जप यज्ञ की सोलहवीं कला के समान भी नहीं होते । समस्त पुण्य साधना में जप यज्ञ सर्वश्रेष्ठ है ।

भगवान शंकर –तारक मंत्र राम भगवान विष्णु की गुप्त मूर्ति है । संसार में जो लोग नित्यप्रति राम –राम जपा करते है उन्हें किसी समय मृत्यू आदि के भय नहीं हुआ करतें है।कलयु ग में तो एक मात्र राम नाम से मुक्ति हो सकती है और किसी उपाय से नहीं । जो उस मंत्र जप में तत्पर है उनकी माया दूर हो जाती है । काशी में मै ही मरणासन्न पुरूषों को उनके मोक्ष के लिए तारक मंत्र राम नाम का उपदेश करता हूँ ।

महर्षि वाल्मीकि – हे राम जिसके प्रभाव से मैंने ब्रह्मऋषि पद प्राप्त किया है ,आपके उस नाम की महिमा का कोई किस प्रकार वर्णन कर सकता है ।

श्री **सुग्रिव** – जिसकी वाणी एक क्षण भी राम –राम ऐसा सुमधुर गान करती है वह ब्रह्मधाती अथवा मद्यपी भी क्यों न हो समस्त पापों से छूट जाता है ।

कुम्भकरण –जो लोग रात–दिन मन और वचन से भगवान राम का भली प्रकार से भजन करते है वे बिना प्रयास ही संसार को पार कर श्री हरि के परमधाम को जाते है ।

नारद जी – जो लोग आपका नाम स्मर्ण करते हुए ,रूप का ह्रदय में ध्यान करते है , आपकी पूजा में तत्पर रहते है आपके कथामृत का पान करते रहते है तथा आपके भक्तों का संग करते है ,उनके लिए यह संसार गाय के पद के समान हो जाता है । हजारों जन्मों के किए हुए तप,ध्यान और समाधी द्वारा क्षीण पाप वाले मनुष्यों कि भक्ति भगवान कृष्ण में उत्पन्न होती है ।

हनुमान जी – आपका नाम स्मर्ण करते हुए मेरा चित्त तृप्त नहीं होता ,अतः मैं निरन्तर आपका नाम स्मर्ण करता हुआ पृथ्वी पर रहूँ ,जबतक संसार में आपका नाम रहे तबतक मेरा शरीर भी रहे ।

श्री कृष्ण – जो निरंतर कृष्ण ,कृष्ण कह कर मेरा स्वर्ण करता है , उसको नरक से मैं उसी तरह से निकाल लेता हूँ , जैसे जल फोड़ कर कमल निकल आता है । हे मनुष्यों , मैं स्वयं ऊपर भुजा उठाकर सदा कहा करता हूँ कि जो जीव मुझे प्रतिदिन मरण काल में या रण की स्थिति में है ,उस व्यक्ति को मैं उसकी अभिष्ट वस्तु दे देता हूँ । भले ही उसका ह्रदय पत्थर या काठ की तरह कठोर हो ।

कुंति – हे केशव अपने कर्मफल के अधिन होकर जिस –जिस योनी मैं जन्म लूं ,उस–उस योनि में मेरी भक्ति आप में बनी रहे । हे प्रभू आप मुझे सदैव दुःख एवं परेशानिया देते रहता क्योंकि दुःखों में आप हरपल याद आते हो , सुख में आपकी याद विस्मृत हो जाती है ।

श्री **संजय** – जो आर्त हैं ,दुःखी है ,शक्तिहीन है,भयानक हिंसक पशुओं के मध्य पड़कर जो भयभीत हो गए है । वे लोग नारायण शब्द का उच्चारण मा़त्र करके दुःख से मुक्त होकर सुखी हो जाते है ।

श्री **विदुर** –भगवान कृष्ण के जो भक्त शमगुण से सम्पन्न है और जिन्होने निरंतर अपने मन को उनमें लगा रखा है , उन भक्तों का जो दास है ,उस दास का मैं प्रत्येक जन्म में दास बनु । हरि का नाम ही मेरा जीवनर है । कलियुग में नाम के अतिरिक्त और कोई गति है ही नहीं ।

श्री **कर्ण** – हे श्री श्रीनिवास ,आप में भक्ति होने के कारण आपके चरणकमलों को छोड़कर मैं अन्य कुछ न कहता हूं , न सुनता हूं ,न सोचता हूं ,न किसी अन्य देवता का स्मर्ण

करता हूं ,न भजन करता हूं , न ही आश्रय ग्रहण करता हूं । इसलिए हे पुरूषोत्तम आप मुझे अपनी दासता प्रदान करें ।

ईश्वर – हे पुत्र जो मनुष्य एक बार नारायण कह देता है ,वह तीन सौ कल्पपर्यन्त गंगा आदि सभी तीर्थो में नहाने का फल पा लेता है । जहां भगवान की श्रेष्ठ कथा होती है वहां गंगा , यमुना , गोदावरी , सिंधु और सरस्वती आदि सभी तीर्थ बसतें है ।

श्री **यमराज जी** –नरक में कष्ट झेलते जीव से यम कहते है कि क्या तुमने क्लेश के नाश करने वाले भगवान केशन का पूजन नहीं किया ।

श्री **गौतम जी** – करोड़ गौओं का दान, ग्रहण में काशी का स्नान, प्रयाग में गंगा तट पर दसहजार कल्पपर्यंत वासकरना, दस हजार यज्ञ करना और मेरू पर्वत के बराबर स्वर्ण का दान करना – ये सभी गोविन्द नाम के एक बार स्मर्ण के समान है ।

श्री **अ्त्रि मुनि** –गोविन्द का उच्चारण सदा स्नान है ,सदा जप है ,सदा ध्यान है ,गोविन्द के तीन अक्षर परम ब्रह्मरूप है इसलिए जिसने गोविन्द रूप इन तीन अक्षरों को उच्चारण किया , वह ब्रह्म में लीन हो जाता है ।

श्री **शुकदेव जी** – अच्युत नाम कल्पतरू है, अनन्त नाम कामधेनू है ,और गोविन्द नाम चिन्तामणी है , इसलिए हरि के नाम का स्मर्ण करना चाहिए ।

श्री **पिप्लायन जी** – आध्यात्मिक , आधिदैविक और आधिभौतिक इन तीनों तापों को दूर करने वाले संसार के औषधस्वरूप भगवान कृष्ण को नमस्कार है । बिच्छू , जल , अग्नि , सॉप , रोग औरी क्लेश को दूर करने वाले भगवान को नमस्कार है । श्री हरिरूप गुरू को नमस्कार है ।

श्री वसिष्ठ जी – जिसकी वाणी से मंगलमय कृष्ण नाम उच्चारित होता रहता है ।उसके करोडों महापातक शीघ्र ही जल जाते है और उस का पुर्नजन्म नहीं होता अर्थात वह मुक्त हो जाता है ।
श्री अग्नि देव – ईर्ष्या आदि दोषों से ग्रस्त चित्तों के द्वारा भी स्मर्ण किए गए भगवान श्री हरि पापों को वैसे ही हर लेते हैं जैसे अनिच्छा से संस्पृष्ट (स्पर्श की गई) अग्नि जला ही देती है ।

धन्वन्तरि जी – अच्युत , अनन्त और गोविन्द ये तीनों नाम औषधि का फल देते है । इनका उच्चारण करने से सभी रोग नष्ट हो जाते है, यह बात मैं सत्य ,सत्य कहता हूं ।

वामदेव जी – प्राणियों द्वारा पल भर या आधा पल भी जहॉ विष्णु का चिंतन किया जाए तो उससे करोड़ों –करोड़ कल्प तक वाछिंत फल प्राप्त होता रहता है , एवं वहीं कुरूक्षैत्र, प्रयाग तथा नैमिषारण्य तीर्थ है ।
शौनक जी – भगवान विष्णु के भक्त तो भोजन ,आच्छादन की चिंता करते है , वह व्यर्थ है क्योंकि जो संसार का पालन कर रहा है , वह भक्तों की उपेक्षा कैसे करेगा ।

तुलसीदास जी –

साधक नाम जपहिं लय लाऍ होहिं सिद्व अनिमादिक पाऍ ।
जपहिं नामु जन आरत भारी । मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारि ।।
सहित दोष दुःख दास दुरासा । दलइ नामु जिमि रवि निसि नासा ।।

सेवक सुमिरित नामु सप्रिति ।बिनु श्रम प्रबल मोह दलु जीती ।।
नहीं कलि करम न भगति विवेकू । राम नाम अवलंबन एकू ।।
भॉय कुभॉय अनख आलसहूॅ । नाम जपत मंगल दिसी दसहूॅ ।।
अति बड मोरि ढिठाई खोरि । सुनि अद्य नरकहॅू नाक सिकोरी ।।
रहति न प्रभू चित चूक किए की । करत सूरति सय बार हिए की ।।
कामिहि नारि पियारि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम । तिमि रधुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम
राम नाम रटते रहो जब तक घट में प्राण । कबहुं तो दीनदयालु के भनक परैगी कान
कबीरदास जी –

राम नाम को सुमिर ले हॅसि के भावे खीज ।उलटा –सुलटा ऊपजे ज्यों खेतन में बीज ।।
सभी रसायन हम करी नहीं नाम सम कोय ।रंचक घट में संचरे , सब तन कंचन होय
जब ही नाम ह्रदय धरयो ,भयो पाप को नाश। मानो चिनगी अग्नि की पड़ी पुरानी घास।।
जागत से सोवन भला, जो को जाने सोय । अंतर लव लागी रहे सहजे सुमिरन होय ।।
सांस सुफल सोई जानिए ,हरि सुमिरन में जाय।और सांस यों ही गए करि–करि बहुत उपाय।।
जप–तप संयम साधना ,सब सुमिरन के मॉहि। कबिरा जानै राम जन सुमिरन सम कछु नाहिं।।
चिंता तो हरि नाम की और न चितवै दास।जो कछु चितवै नाम बिनु सौई काल की फॉस ।।
कथा–कीरतन कलिविषे , भव सागर की नाव , कह कबीर या जगत में नांहि और उपाय ।।
देह धरे का फल यही भज मन कृष्ण मुरारि । मनुष जनम की मौज यह मिले न बारंबार ।।
तन पवित्र सेवा किये धन पवित्र किये दान । मन पवित्र हरि भजनतें होय त्रिविध कल्याण।।
मन फुरना से रहित कर जाहीं विधी से होय। चहै भगति चहै ध्यान कर चहै ज्ञान से खोय ।।
केशव केशव कूकिये ना कूकिये असार । रात दिवस के कूकते कबहूॅ तो सूनै पुकार ।।
दुनियॉ सेती दोस्ती होय भजन में भंग । एका एकी राम से कै साधुन के संग ।
कहा भरोसो देह को बिनसि जात छिन मॉहि।सॉस–सॉस सुमिरन करो और यतन कछु नाहिं।।
जीवन थोरा ही भला जो हरि सुमिरन होय । लाख बरस का जीवना लेखे धरे न कोय ।।
कबिरा सूता क्या करै जागो जपो मुरारि । एक दिना है सोवना लंबे पॉव पसारि ।।
सुखके माथे सिल पड़ो जो नाम ह्रदयसे जाय।बलिहारी वा दुःखकी जो पल–पल नाम जपाय।।

राम नाम को सुमिरते उधरे पतित अनेक । कह कबीर नहीं छाड़ीये राम नाम की टेक ।।
बाहर क्या दिखराइये अन्तर जपिये राम । कहा काज संसार से तुझे धनी से काम ।।
आया था कछु लाभ को खोय चल्या सब मूल । फिर जाओगे सेठ पॉ पलै पड़ैगी धूल ।।
ज्यूॅ तीरथ मेला मॅडा मिला आय संयोग । आप आपने जायेंगें सभी बटाऊ लोग ।।

नाराण दास जी –
संत जगत में से सूखी मैं मैरी का त्याग । नारायण गोविंद पद दृढ राखत अनुराग ।।
नारायण हरि लगन में यह पॉचों न सुहात । विषय भोग, निद्रा , हॅसी , जगत प्रीत, बहुबात ।।

धन जौबन यों जायेंगे जा बिध उड़त कपूर । नारायण गोपाल भज क्यों चाटत जग धूर ।।

सगराम दास जी महाराज –

कहे दास सगराम मनै यो इचरज आवे । मिनख कियो महाराज भलै तू कांई चावे ।।
कांई चावै है भले यूं तो मने बताय ।राम नाम कह रात दिन जनम सफल हो जाय ।।
जनम सफल हो जाय बास अमरापुंर पावै।कहे दास सगराम मनै ये इचरज आवे ।।

जनम –जनम में करज कियो है माथे करड़ो । मिनख कियो महाराज काटदै क्यूं नहीं खरड़ों ।।
यो खरड़ो करड़ो धणो कींकर बणो बणाव । निसबासर सगराम कहै रामधणी ने ध्याव ।।
रामधणी ने ध्याव बालळदे खावंद खरड़ो । जनम –जनम में करज कियो है माथे करड़ो

कहे दास सगराम भजन करता हो दोरा । लख चौरासी जूण भूगततां होजो सोरा ।।
सोरो होजो भुगततां घणी सहोला मार । गधा होवेला ओड रा माथे लदसी भार ।।
माथे लदसी भार रेत रा भर–भर बोरा । कहे दास सगराम भजन करता हो दोरा

जाय पड़े नर नरक में मार जमां री खाय । जीभ हिलायां होवे भलो जिको कियो न जाय ।।
जिको कियो न जाय इसो कांई है दोरो ।। धणी भोलायो काम जिको सारा में सोरो ।।
किण खातिर खावंद करे सगरामदास सहाय । जाय पड़े नर नरक में मार जमां री खाय ।।

कहे दास सगराम भजन री करड़ी घाटी ।आड़ा ऊभा पाप हाथ में लियां लाठी ।।
लाठी लीयां हाथ में पांव धरण दे नाहीं । आगे मेलूं पांवड़ौ तो दे गाबड़ के मांहि ।।
दे गाबड़ के मांहि कमाई किन्ही माठी । कहे दास सगराम भजन री करड़ी घाटी

कहे दास सगराम रया दिन बाकी थोड़ा । कर सुकृत भजराम दरगड़े घालो घोड़ा ।
घोड़ा घालो दरगड़े जद पूगोला ठेठ । बिचलै बासै रह गया तो पड़सो किणरे पेट ।।
पड़सो किणरे पेट पड़ेला भारी फोड़ा । कहे दास सगराम रया दिन बाकी थोड़ा

पहर पाछली रात रा भजन करो चित लाय ।प्रात समय सगराम कहे सहस गुणों होय जाय ।
सहस गुणों होय जाय सीख सतगुरू फरमाई । कहे शास्त्र अरू संत तिका में कसर न कांई ।।
सतपुरूषां रा वचन है संत कहे समझाय । पहर पाछली रात रा भजन करो चित लाय ।।

खरड़ो – उधार का खत ,निसबासर – रात दिन ,खावंद – परमात्मा या मालिक ,जमां – यमराज , दोरो – कठिन , सोरो – आसान , किण खातिर – किस कारण

ध्यान – निर्विचार अवस्था का अभ्यास ही ध्यान है जो परिपक्व होने पर समाधी में परिवर्तित हो जाता है ।

त्राटक– (निर्विचार होकर किसी भी वस्तु को बिना पलक झपकाएं लम्बे समय तक देखना),

तन्मात्रा साधना – (शब्द, रूप, रस, गन्ध एवं स्पर्श की साधना –इसमें क्रम से इन वस्तुओं को काम में लेकर फिर हटालेते है और ऑखें बंद कर उन्हें महसूस किया जाता है ऐसा बार –बार करते है ।)आदि प्रमुख साधन है ।

4 वाणी – मौन कम बोलना,प्रिय बोलना, एवं सत्य एवं यर्थाथ बोलना(जैसा ज्ञात है वैसा बोलना), युक्तियों से शास्त्रों की व्याख्या एवं भगवतचर्चा ही वाणी के प्रमुख तप है ।इसके अतिरिक्त व्यर्थ वाद–विवाद एवं तर्को से दूर रहना, श्रेष्ठता के अहंकार से रहित सरल भाव –भंगिमा के साथ बोलना, श्रेष्ठ भक्तों एवं ज्ञानियों से ही वार्तालाप हो मूर्खों से नहीं , वाणी में विनम्रता हो, प्रेम हो, शिष्टता हो,एवं सामने वाले का सम्मान हो , गलती होने पर क्षमा मांगना एवं कष्ट के लिए धन्यवाद अवश्य देना । मौन के द्वारा व्यक्ति की प्राण शक्ति में वृद्वि होती है एवं अनेक सिद्वियों की प्राप्ति होती है । वाणी जो हमारे मुख से निकलती है उसका प्रारम्भिक रूप कम्पन्न है , जो हमारी नाभी के निचले भाग में उत्पन्न होती है उसे परा कहते है । नाभी केन्द्र को पश्चन्ति , हृदय को मध्यमा , कण्ठ को बैखरी , और मुहॅ से शब्द बाहर निकलते हैं उन्हें स्थूल शब्द कहते है । उच्च कोटी के साधक नाभी केन्द्र की पश्चन्ति वाणी का प्रयोग करते है । इसका श्रवण भी योग स्तर का व्यक्ति ही कर सकता है । परावाणी का प्रयोग केवल समाधी में ही होता है ।

5 शरीर – शरीर ही व्यक्ति का लोक एवं परलोक सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । एक स्वस्थ शरीर सभी प्रकार की साधना एवं सिद्वि प्राप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है ।,जप– तप , सेवा , व्रत ,पूजन , तीर्थयात्रा , आदि श्रेष्ठ कार्य स्वस्थ शरीर से ही संभव है । **व्यायाम ,आहार संयम , उपवास , ब्रह्मचर्य** ,, परोपकार एवं स्वधर्मपालन में कष्ट सहना ही ही शरीर के प्रमुख तप है ।

व्यायाम – प्रतिदिन नियमित रूप से व्यायाम शरीर को स्वस्थ रखने के लिए परम आवश्यक है ।

उपवास – साप्ताहिक उपवास तो प्रत्येक व्यक्ति को अवश्य करना चाहिए ,जिससे शरीर के पाचनतंत्र के विकार सामाप्त होकर शरीर स्वस्थ रहता है ।

आहार का संयम – उचित मात्रा में व्रत करो, तीव्र भूख लगने पर ही भोजन करो, पोष्टिक आहार लेना जैसे – आंवला, अंकुरित अन्न , फल, बादाम, चने, मुनक्का, दूध–दही, हरिसब्जी,सलाद, हरडे, शतावरी, आदि ।सही प्रकार से बैठ कर ,हाथ –पैर , मुहॅ धोकर, अच्छी प्रकार से चबाकर,बिना आवाज किये भोजन करना चाहिए । हानिकारक एवं गरिष्ठ भोजन से बचना चाहिए जैसे अधिक मा़त्रा में चाय, नमक, धी–तेल , प्याज – लहसुन आदि

ब्रह्मचर्य –मन ,वचन एवं कर्म से मैथुन का त्याग ही ब्रह्मचर्य है । ब्रह्मचर्य के अभाव में व्यक्ति रक्ताअल्पता ,विस्मर्ण ,तथा शारिरिक दुर्बलता से पीडित हो जाता है वीर्य के हास से रोगप्रतिरोधकशक्ति धटती है एवं जीवनशक्ति का ह्रास होता है एवं आयू क्षीण होती है, मन एवं शरीर कमजोर हो जाते है एवं ईश्वर प्राप्ति उनके लिए असंभव हो जाती है , संसार उनके लिए दुखालय हो जाता है ।वह न तो स्वयं उन्नती कर पाता है और न ही सामाज में कोई महान कार्य ही कर पाता है । इसीलिये हर युग में महापुरूष लोग ब्रह्मचर्य पर जोर देते है ।
ब्रह्मचर्य के पालन से बुद्वि कुशाग्र बनती है , रोग प्रतिरोधक शक्ति बढती है ,मनोबल पुष्ट होता है एवं संकल्पों में दृढता आती है । आध्यात्मिक विकास का मूल भी ब्रह्मचर्य ही है ।इसीलिए बूढे लोग किसी भी साधना का साहस नहीं जुटा पाते क्योंकि विषय भोगों से उनका ओज –तेज नष्ट हो चुका होता है मन मजबूत हो तो भी उनका जर्जर शरीर उनका साथ नहीं

दे पाता ।साधना के द्वारा जो साधक वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाकर योगमार्ग में आगे बढते है वे कई प्रकार की सिद्वियों के मालिक बन जाते है ,उसे परमानंद एवं आत्मसाक्षात्कार शिघ्र ही हो जाता है ।

भगवान शंकर कहते है –हे पार्वती , बिन्दू अर्थात वीर्य रक्षण सिद्व होने के पश्चात कौन–सी सिद्वि है जो साधक को प्राप्त नहीं हो सकती । ब्रह्मचर्य ही उत्क्रष्ट तप है । इससे बढकर तपश्चर्या तीनों लोकों में नहीं हो सकती ऊर्ध्वरेता पूरूष इस लोक में मनुष्यरूप में प्रत्यक्षरूप से देवता ही है । ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही मेरी ऐसी महान महीमा हुई है ।

अर्थवेद में लिखा है – ब्रह्मचर्य का पालन सभी पापों का नाश कर देता है । ब्रह्मचर्य रूपी तप से देवों ने मृत्यू को जीत लिया है । देवराज इन्द्र ने भी ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही इस उच्च पद को प्राप्त किया है । ब्रह्मचर्य ही उत्कृष्ट व्रत है ।

जैन शास्त्र – ब्रह्मचर्य सब तपों में उत्तम तप है ।बिन्दूनाश (वीर्यनाश) ही मृत्यू है और बिन्दूरक्षण ही जीवन है । अब्रह्मचर्य घोर प्रमाद रूपी पाप है ।

वैद्यकशास्त्र – ब्रह्मचर्य ही परमबल है ।

योगीराज गोरखनाथ – पति के वियोग में कामिनी तडपती है और वीर्यपतन से योगी पश्चाताप करता है ।

युरोप के चिकित्सक **डॉ निकोल** – यह एक भैषजिक और देहिक तथ्य है कि शरीर के सर्वोत्म रक्त से स्त्री तथा पुरूष दोनो ही जातियों में प्रजनन तत्व बनते है । शुद्व और व्यवस्थित जीवन में यह तत्व पुनः अवशोषित हो जाता है । यह सूक्षमतम मस्तिष्क ,स्नायू और मांसपेशिय उत्तकों का निर्माण करने के लिए तैयार होकर पुनः परिसंचरण में जाता है । मनुष्य का यह वीर्य वापस ऊपर जाकर शरीर में विकसित होनेपर उसे निर्भिक ,बलवान ,साहसी और वीर बनाता है । यदि इसका अपवयय किया गया तो यह उसे स्त्रैण, दुर्बल,कृशकलेवर एवं कामोत्तेजनशील बनाता है तथा उसके शरीर के अंगों के कार्यव्यापार को विकृत एवं उसके स्नायुतंत्र को शिथिल (दुर्बल) करता है । और उसे मिर्गी, एवं अन्य अनेक रोगों एवं मृत्यू का शिकार बनादेता है । जननेन्द्रिय के व्यवहार की निवृत्ति से शारिरिक ,मानसिक तथा अध्यात्मिक बल में असाधारण वृद्वि होती है ।

डॉ डिओ लूई – शारिरीक बल , मानसिक ओज तथा बोद्विक कुशाग्रता के लिए इस तत्व का संरक्षण परम आवश्यक है

डॉ ई पी मिलर – शुक्रस्त्राव का अपव्यय जीवनशक्ति का प्रत्यक्ष अपव्यय है । ।व्यक्ति के कल्याण के लिए जीवन में ब्रह्मचर्य परम आवश्यक है । वीर्यक्षय से विशेषकर तरूणावस्था में वीर्यक्षय से विविध प्रकार के रोग उत्पन्न होते है जैसे शरीर में व्रण , चेहरे पर मूहांसे ,नेत्रों के नीचे कालापन, दाढी का अभाव ,धसे हुए नेत्र, रक्तापल्पता ,स्मृतिनाश ,दृष्टि की क्षीणता ,मूत्र के साथ वीर्यस्खलन ,अण्डकोश की वृद्वि या उनमें पीडा ,दुर्बलता या नीदं न आना ,आलस्य उदासी या ,हृदयकम्प ,श्वसावरोध,यक्ष्मा,पृष्ठशूल ,कटिवात, शोरोवेदना ,संधी–पीडा, दुर्बल–वृक, निद्रा में मुत्र निकल जाना ,मानसिक अस्थिरता, विचार शक्ति का अभाव , दू:स्वप्न, स्वप्नदोष , तथा मानसिक अशांति आदि ।

वीर्य बनने में 30 दिन व 4 धण्टे लगते है । 32 किलो भोजन से 700 ग्राम रक्त बनता है 700 ग्राम रक्त से लगभग 20 ग्राम वीर्य बनता है जिसे बनने में लगभग 40 दिन लगते है

और एक बार के मैथुन में लगभग 15 ग्राम वीर्य निकल जाता है । अतः वीर्य को क्षणिक सुख के लिए नष्ट नहीं करना चाहिए ।

सुकरात से एक व्यक्ति ने पूछा जीवन में कितनी बार स्त्री प्रसंग करना उचित है जवाब था जीवन में एक बार । यदि इससे तृप्ती न होसके तो महिने में एक बार फिर भी मन न भरे तो महिने में दो बार लेकिन मृत्यु शिघ्र आयेगी यदि इतने पर भी इच्छा बनी रहे तो जवाब था तो ऐसा करें पहले कब्र खुदवालें , कफन और लकडी घर में लाकर रखें फिर इच्छा हो से करों ।

राजा मुचकुंद ने भगवान से वरदान में भक्ति मांगी भगवान ने कहा – तूने जवानी में खुब भोग भोगें है विकारी जीवन जीने वाले को दृढ भक्ति नहीं मिलती ,दृढ भक्ति के लिए जीवन में संयम होना बहुत जरूरी है तेरा यह शरीर समाप्त होगा तब दूसरे जन्म में तुझे भक्ति प्राप्त होगी ।

श्री रामकृष्ण परम हसं कहा करते थे कि किसी भी सुंदर स्त्री पर नजर पड जाए तो उसमें मॉ जगदम्बा का दर्शन करो ऐसा विचार करों कि यह अवश्य ही देवी का अवतार है तभी तो इसमें इतना सौदर्य है । माँ प्रसन्न होकर इस रूप में दर्शन दे रही है , ऐसा समझकर सामने खडी स्त्री को मन ही मन प्रणाम करों ऐसा करने से तुम्हारे भीतर काम विकार न उठसकेगा । जब तक पराई स्त्री मॉ नजर नहीं आयेगी तब तक मुक्ति को कोई उपाय नहीं है । एक वैश्या से लेकर कुलवधु तक सभी मॉ जगदंबा मे रूप एवं उसका हास–विलास है और कुछ नहीं ।

महाभारत में लिखा है –काम संकल्प से उत्पन्न होता है उसका सेवन किया जाए तो बढता है और जब बुद्विमान पुरूष उससे विरक्त हो जाता हे तब वह काम तत्काल नष्ट हो जाता है

अन्य प्रमुख तप इस प्रकार है –अस्वाद तप (धी–तेल, मिर्च –मसाले रहित एकदम स्वाद रहित भोजन करना), तितिक्षा (सर्दी–गर्मी, बरसात, आदि ऋतुओं एवं लोगों के कटुवचन ,दुर्व्यवहार एवं अपमान को क्षमाकर सहन करना), कर्षण तप (स्वावलंबन अर्थात अपना कार्य स्वयं ही करना एवं सदा जीवन जीना अर्थात सुख साधनों का न्यूनतम उपयोग करना) गव्यकल्प तप (गो सवा एवं गाय के दूध – दही का अधिक उपयोग) प्रदातव्य तप अर्थात दान करना (प्रमुख दान – अन्न,जल, वस्त्र, भूमि – भवन , सम्मान करना , सेवा करना , ज्ञान , कन्यादान, फल , जूते , छाता आदि है ।), निष्कासन तप (अपनी कमियों एव पापों को दूसरों को बताना) चान्द्रायण व्रत (चन्द्रमा की कलाओं के अनुसार कम करना एवं बढाना), अर्जन तप (विद्याध्ययन,संगीत,नृत्य ,गायन आदि कलाएं सीखना) ।

ईश्वर प्राप्ति के लिए उनका स्मर्ण (स्वाध्याय सतसंग ,चिन्तन आदि के माध्याम से) , पूजन , ध्यान ,नाम– जप , शरणागति ग्रहण करना प्रमुख साधन है । एवं स्वर्ग प्राप्ति के लिये तीर्थ, व्रत, परोपकार (सेव एवं दान आदि के द्वारा), यज्ञ, यम–नियम , योग एवं तप आदि प्रमुख साधन है ।